ओ३म्

**‘महर्षि दयानन्द का सन् 1879 में देहरादून आगमन और आर्य समाज’**

-मनमोहन कुमार आय, देहरादून।

स्वामी दयानन्द ने सन् 1863 में मथुरा में प्रज्ञाचक्षु दण्डी स्वामी गुरू विरजानन्द सरस्वती से विद्या प्राप्त कर गुरू की प्रेरणा व आज्ञा से सत्य के मण्डन व असत्य का खण्डन का कार्य चुना था। उन्होंने अपने अपूर्व ज्ञान व वैदुष्य के कारण वैदिक मान्यताओं को सत्य पाया और अन्य विचारधाराओं को असत्य या सत्यासत्य मिश्रित। अतः उन्होंने सत्य का मण्डन तथा असत्य का खण्डन किया। इसी सिद्धान्त का पालन करते हुए उन्होंने लोगों की सहायता के लिए प्रायः सभी प्रचलित मत-मतान्तरों की मिथ्या मान्यताओं की समीक्षा की जिससे सभी मतों के लोग सत्य व असत्य के यथार्थ स्वरूप को जानकर सत्य को ग्रहण व असत्य को छोड़ सकें। स्वामीजी देश भर में वेदों का प्रचार करते थे। काशी विद्या व धर्म की नगरी कही जाती थी। अतः काशी में वेदों की प्रतिष्ठित किया जाना आवश्यक था। इसके लिए ईश्वर के वैदिक स्वरूप की स्थापना तथा इसके विपरीत मूर्तिपूजा को वेद, तर्क व युक्ति से खण्डित करना आवश्यक था। जब ईश्वर सर्वव्यापक, निराकार, सूक्ष्मातिसूक्ष्म व सर्वान्तर्यामी है तो फिर उसकी मूर्ति बनने का प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता। क्या आकाश व हवा का चित्र बनाया जा सकता है। इसी प्रकार से ईश्वर एक सर्वव्यापक चेतन पदार्थ हैं, उसकी पाषाण व अन्य किसी पदार्थ की मूर्ति नहीं बन सकती और जो बनायी जाती है वह एक आकृति तो हो सकती है परन्तु उसमें ईश्वर का कोई विशेष प्रभाव, गुण व सामर्थ्य नहीं होते। महर्षि दयानन्द ने काशी के विद्वानों व पण्डितों को चुनौती दी और 16 नवम्बर को वहां के आनन्द बाग में पचास हजार मनुष्यों की उपस्थिति में शास्त्रार्थ हुआ। पौराणिक विद्वान वेदों से मूर्तिपूजा को सिद्ध नहीं कर सके, अतः मूर्ति पूजा वेद, तर्क व युक्ति के विरूद्ध सिद्ध हुई। इसके बाद की बड़ी घटना 10 अप्रैल, सन् 1875 को महर्षि दयानन्द जी द्वारा मुम्बई में आर्य समाज को स्थापित करना है। मुम्बई में आर्यसमाज की स्थापना के बाद देश के अन्य स्थानों पर आर्यसमाजों की स्थापना होना आरम्भ हो गया। स्थान-स्थान से महर्षि दयानन्द जी को आमन्त्रित किया जाता था। देहरादून से वन अनुसंधान संस्थान में कार्यरत पं. कृपाराम जी ने महर्षि दयानन्द को आमन्त्रित किया था। इसकी पृष्ठ भूमि यह थी कि देहरादून के मिशन स्कूल में पढ़ने वाले नगर के सेठ प्रमुख के दो पुत्र श्री बलदेव सिंह और मोहर सिंह ईसाईयत से प्रभावित होकर हिन्दू धर्म को छोड़कर ईसाई बन रहे थे। उन्होंने हिन्दू मतावलम्बियों और धर्म गुरूओं को उनकी शंकाओं का समाधान करने के लिए 6 महीने का समय दिया था। इस पर यदि किसी को सर्वाधिक चिन्ता हुई तो वह पं. कृपाराम जी थे जिन्होंने इस कार्यार्थ स्वामी दयानन्द जी को देहरादून आमंत्रित किया था। पं. कृपाराम समझते थे कि केवल महर्षि दयानन्द ही अपने विचारों व तर्कों से सन्तुष्ट कर इन युवकों को विधर्मी होने से बचा सकते थे। महर्षि दयानन्द पधारे और इस कार्य में सफल हुए। यह महर्षि दयानन्द की देहरादून तथा मुख्यतः हिन्दू मतावलम्बियों को बहुत बड़ी देन है। उन्होंने इन युवकों के ईसाई व वैदिक-हिन्दू धर्म सम्बन्धी सभी प्रश्नों व शंकाओं का सन्तोषजनक समाधान किया था। ऐसी घटनायें महर्षि व आर्य महापुरूषों के जीवन में अनेक स्थानों पर हुई थी।

महर्षि दयानन्द सन् 1879 के कुम्भ के मेले में हरिद्वार आये हुए थे। वहां से वह 14 अप्रैल, 1879 को पूर्वान्ह में हरिद्वार रोड से होते हुए देहरादून पहुंचे थे। देहरादून पहुंचने पर श्री कृपाराम जी के भतीजे तथा दो कर्मचारियों ने स्वामीजी की अगवानी की। बहुत से बंगाली सज्जन भी स्वामीजी के स्वागतार्थ हरिद्वार रोड पर पहुंच गये थे। स्वामीजी हरिद्वार से देहरादून पं. भीमसेन, श्री नीलाम्बर तथा एक विद्यार्थी सहित पहुंचे थे। यहां से स्वामीजी को निवास के लिए पूर्व निर्धारित स्थान राजपुर रोड स्थित मिस डक के बंगले पर ले जाया गया था। स्वामीजी के देहरादून पहुंचने का समाचार पाकर पं. कृपाराम जी भी कार्यालय से अवकाश लेकर स्वामीजी के पास पहुंच गये। देहरादून के अनेक लोग स्वामी जी के दर्शनार्थ मिस डक के बंगले पर पहुंचे थे। स्वामीजी उनसे मिलने आये लोगों से भिन्न भिन्न विषयों पर बातंे करते रहे। हरिद्वार में ही स्वामीजी को अतिसार रोग हो गया था। यहां देहरादून पहंुचने पर भी रोग पूरे वेग पर था। स्वामीजी की दशा यह थी कि बातचीत के बीच में ही उन्हें शौच के लिये जाना पड़ता था। यहां उपस्थित भक्तों में से किसी ने कहा कि स्वामीजी आपके उपचार के लिए किसी डाक्टर को बुला लाते हैं। इस पर स्वामी जी ने कहा कि मैं डाक्टरी औषधि का सेवन नहीं करूंगा। अतः आपने डाक्टरी ओषधि नहीं ली।

इस पहले दिन जब सभी लोग चले गये तो स्वामी जी ने पं. कृपाराम जी को एकान्त में बुलाया और पूछा कि उनको बुलाने के लिए यहां जो धन संग्रह किया गया है उनमें कौन लोग सम्मिलित हैं? इस पर स्वामीजी को प्राप्त हुए चन्दे की सूची दिखलाई गई। इस सूची में बंगाली बन्धुओं के अतिरिक्त केवल दो नाम अन्यों के थे। सूची में जिन बंगालियों के नाम थे वह सब के सब ब्राह्म समाज के सदस्य थे। स्वामी जी ने इस पर अत्यन्त खेद व्यक्त करते हुए कहा कि इन लोगों के भरोसे पर तुम्हें यह बोझा अपने सिर पर नहीं उठाना चाहिए था क्योंकि ये लोग आज तुम्हारे मित्र तथा कल शत्रु हो जाएंगे। यह तुमने भूल की जो उनके विश्वास पर कार्य किया। महर्षि की इस टिप्पणी का कारण लाहौर आदि कई नगरों में इन लोगों का उनके प्रति अनुचित व्यवहार था। अन्य स्थानों पर ब्राह्मसमाज के बंगाली बन्धुओं ने बहुत सहयोग किया। अत्यन्त उत्साह से आगे आये परन्तु फिर अकारण ही पीछे ही न हटे अपितु विरोधी भी बन गये। आगे देखा गया कि यह आर्य संस्कृति से ही कटते गये और राजा राममोहनराय का भी मार्ग छोड़ गये। सम्भव है इसके पीछे अंग्रेजी सरकार का कोई षडयन्त्र रहा हो। वह आर्य समाज, वैदिक धर्म व संस्कृति की उन्नति को अपने साम्राज्य के विपरीत मानते थे। स्वामीजी की बातें सुनकर पण्डित कृपाराम जी ने कहा कि आप इसकी तनिक भी चिन्ता न करें। यदि वह सहायता नहीं करेंगे तो वह अकेले ही स्वामीजी की सेवा के लिए पर्याप्त हैं। इस पर स्वामी जी ने कहा--मुझे यह अभिप्रेत नहीं कि किसी एक ही व्यक्ति को कष्ट दूं।

स्वामीजी ने दो दिन कुछ विश्राम किया जिससे उनका अतिसार का रोग कुछ कम हुआ। कुछ स्वस्थ होकर स्वामी जी ने अपने व्याख्यानों, शंका समाधान व शास्त्रार्थ आदि का विज्ञापन प्रचारित किया। मिस डक के बंगले पर ही व्याख्यान होने लगे। पहला व्याख्यान ईश्वर विषय पर हुआ। इसमें लगभग तीन सौ लोग उपस्थित थे। अपने प्रवचन में स्वामी जी ने नास्तिक मत का बड़ी योग्यता से खण्डन किया। दूसरा व्याख्यान **‘वेद ईश्वरीय ज्ञान है’** विषय पर हुआ। इस व्याख्यान में वेद की बाइबिल तथा कुरान से तुलना भी की गई। तीसरा व्याख्यान धर्म विषय पर हुआ। इस व्याख्यान में एक श्रोता अंग्रेज भी थे। इस व्याख्यान में मूर्तिपूजा का खण्डन भी हुआ। किसी ने कोई आक्षेप या प्रश्न नहीं पूछा। पांचवें से दसवें दिन तक आर्यावत्र्त के प्राचीन इतिहास पर व्याख्यान हुये जिसमें राजा सुग्रीव आदि के जीवन-चरित्र सुनाये गये। श्रोताओं पर इसका व्यापक प्रभाव हुआ। लोग एक दूसरे से यह कहते थे कि वह पीछे से तो बहुत गड़बड़ करते हैं परन्तु स्वामीजी के सामने कुछ कहने की किसी में शक्ति नहीं है। लोगों का यह भी मानना था कि स्वामी जी का व्याख्यान अत्यन्त ओजस्वी तथा प्रभावशाली है तथा उनके तर्क बड़े प्रबल हैं।

एक व्याख्यान में **पांच अंग्रेज मिस्टर पारमर, मिस्टर गार्टलेन, कर्नल ब्रायली, मिस्टर क्रोन और रेवरेण्ड डाक्टर मारेसन** उपस्थित थे। व्याख्यान का विषय बाइबिल तथा कुरान दोनों की मान्यताओं की प्रबल तर्को से युक्तियुक्त समीक्षा थी। **ढाई घण्टे तक व्याख्यान होता रहा जिसमें 500 के लगभग श्रोता थे।** बाइबिल की समीक्षा को सुनकर पादरी महोदय आवेश में आ गये और व्याख्यान के अन्त में बोले कि पण्डित जी ने केवल धूल उड़ाई है तथा अपने वेदमत को उस धूलि में छुपा लिया है। स्वामी दयानन्द जी के प्रवचन में ईसाई मत से सम्बन्धित जिन विचारों की युक्तियुक्त समीक्षा की गई थी, प्रवचन के पश्चात पादरी जी उन्हें उचित सिद्ध करने लगे। उनके द्वारा अपनी बात कह लेने के बाद स्वामीजी ने आवेश में कहे गये अनुचित शब्दों पर कुछ न कहा, केवल पादरी जी के प्रस्तुत तर्कों का युक्तिपूर्वक प्रतिवाद किया। पादरी साहब को शान्त करते हुए डाक्टर मारेसन ने उन्हें कहा कि जिस योग्यता तथा नम्रता से व्याख्यानदाता अपने दावे को सिद्ध करता है, तुम्हें भी उसके अनुरूप क्रोध रहित व्यवहार करना चाहिये। पादरी जी को चाहिये कि जिस दृढ़ता तथा धीरज से स्वामी जी ने अपने पक्ष में प्रमाण दिए और पादरी जी के खण्डन में तर्क देते हैं, वैसा ही वह भी करें। इस सुझाव से और उद्विग्न होकर पादरी जी व्याख्यान स्थल से चले गये। उनके अन्य 4 अंग्रेज साथी स्वामी जी के पास वहीं बैठे रहे। पादरी जी के जाते समय स्वामीजी ने उनसे पूछा कि आप कल आयेंगे? इसका जो उत्तर पादरी जी ने दिया वह किसी की समझ में नहीं आया।

इसके बाद मिस्टर पारमर तथा श्री गार्टलेन ने पण्डित कृपाराम के द्वारा श्री स्वामीजी से वार्तालाप करने की इच्छा व्यक्त की। स्वामीजी ने सहर्ष स्वीकृति दी। मिस्टर बिपनमोहन बोस (मिशन स्कूल देहरादून के हैड मास्टर) ने बाइबिल के बारे में चर्चा छेड़ दी। सायं आठ बजे तक उनसे बातचीत होती रही। अन्ततः हैडमास्टर तथा मिस्टर गार्टलेन का परस्पर झगड़ा हो गया। हैडमास्टर जी बाइबिल को सिद्ध करते थे तथा गार्टलेन खण्डन करते थे। दोनों को शान्त करने का बहुत यत्न किया गया, परन्तु वे चुप नहीं हुए। झगड़े में बारह बज गये और वार्तालाप समाप्त हुआ। स्वामीजी के प्रवचन में बाइबिल और कुरान के अतिरिक्त ब्राह्म समाज के नियमों का भी खण्डन किया गया जिससे वे भी विरोधी बन गये। उन्होंने किसी भी प्रकार की सहायता करने से इनकार कर दिया। स्वामीजी की यही आशंका थी सो उन्हें प्रथम दिन ही पं. कृपाराम जी की भूल पर खेद प्रकट करना पड़ा था। जिस दिन स्वामी जी ने दूसरा व्याख्यान देना था उस दिन मुस्लिम बन्धु बड़ी संख्या में आये थे। उनमें कुछ मौलवी भी थे। स्वामी जी का जहां डेरा था वह फूस का था। स्वामीजी को घर आकर पता चला कि जिस बंगले में स्वामी जी ठहरे हैं, वह आज रात को जला दिया जाएगा तत्काल पण्डित कृपाराम जी ने स्वामीजी को सूचना दे दी। आपने अपने दो तीन सेवक भी वहां भेज दिये। दो चैकीदार भी नियत कर दिये गये। पं. भीमसेन भी रात भर जागते रहे, परन्तु स्वामी जी यही कहते रहे कि भयभीत होने की कोई बात ही नहीं।

दूसरे दिन लगभग डेढ़ सौ मुसलमान स्वामी जी के डेरे पर पहुंच गये और वह उपद्रव करने पर उद्यत प्रतीत होते थे। जब पण्डित कृपाराम जी सूचना मिलने पर वहां पहुंचे तो वहां सब लोग जा चुके थे। स्वामीजी ने पण्डितजी को बताया कि मुसलमानों की भारी भीड़ आई थी। उन्होंने कहा कि हमसे शास्त्रार्थ करो। आपने हमारे मत पर जो दोष लगाये हैं उनकी सफाई कीजिए। स्वामी जी ने कहा--मैं एक-एक से शास्त्रार्थ नहीं कर सकता। पहले शास्त्रार्थ के नियम निश्चित हों फिर जो आप लोगों में सबसे अधिक विद्वान् हो, वह मुझसे शास्त्रार्थ कर सकता है। उन लोगों ने नियम निश्चित करके फिर आने को कहा। मौलवी अहमद हसन का उनमें नाम था। स्वामी जी ने पूछा--यदि कोई उनसे परिचित हो तो बतलावे कि वह कैसे व्यक्ति हैं? लोगों ने कहा कि निस्सन्देह वह एक विद्वान् व्यक्ति हैं तथा बाडीगार्ड में नौकर हैं। तब स्वामीजी ने सम्भावित शास्त्रार्थ के नियम स्वीकार करके उनमें जो संशोधन करना था वह समुचित रूप से करके मुस्लिम बन्धुओं को लौटा दिये परन्तु उस पर फिर कुछ आचरण नहीं किया गया।

स्वामी जी अत्यधिक कार्य तथा व्यस्तता के कारण पुनः अतिसार के रोग से रूग्ण हो गये थे। इसी समय में किसी के बहकाने से मिस डक ने स्वामी जी को बंगला खाली करने का नोटिस दे दिया। लोग कहते थे कि पादरी जी के बहकाने से ऐसा किया गया परन्तु ठीक-ठीक पता नहीं चला कि ऐसा क्यों किया गया। पं. कृपाराम जी ने गथरी जी की कोठी की व्यवस्था करने के लिए उनसे परामर्श कर लिया। इसी बीच अमेरिका वासी कर्नल अल्काट महोदय का तार सहारनपुर से श्री स्वामीजी के नाम आ गया जिसे पाकर स्वामी जी ने तत्काल चलने का निर्णय ले लिया। पं. कृपाराम जी ने स्वामी दयानन्द जी की जीवनी के लेखक आर्य मुसाफिर पं. लेखराम जी को बताया था कि तब हमारा न तो कोई व्यक्ति सहायक था और न कोई धार्मिक कार्य में सहानुभूति रखने वाला (दुःख-सुख का भागीदार) था। महर्षि दयानन्द जी की देहरादून की इस प्रथम ऐतिहासकि यात्रा की महत्वपूर्ण घटना महाशय अलखधारी जी को वैदिक धर्म की दीक्षा का दिया जाना था। अपनी इस यात्रा में स्वामीजी ने सन् 1879 में एक सरल, सात्विक, सत्यनिष्ठ, सज्जन, मुहम्मद उमर को वैदिक धर्म की दीक्षा देकर अलखधारी नाम दिया। श्री अलखधारी तभी से आर्य समाज में प्रविष्ट हो गये थे। इस पर मुसलमानों ने उन्हें बहुत कुछ कहा सुना और यह भी कहा कि तेरी मुक्ति नहीं हो सकेगी। इस पर श्री अलखधारी जी ने कहा कि यदि खुदा सारी सृष्टि का पालनहार (रबउलआलमीन) है, जो कि है, तो मेरी मुक्ति अवश्य होगी।

जब स्वामी जी 30 अप्रैल, 1879 को मेलकार्ट से सहारनपुर चलने के लिए तैयार हुए तो पं. कृपाराम जी उनके पास व्यय हेतु चालीस रूपये लेकर उपस्थित हुए। लोगों से इकट्ठा हुए चन्दे के 15 रूपये भी इसमें सम्मिलित थे। स्वामीजी से पं. कृपाराम जी द्वारा प्रबल अनुरोध किये जाने पर दस रुपये तो लौटा दिये और शेष तीस रुपये व्ययार्थ लेने स्वीकार कर दिये। शेष 10 रुपये लेने के लिए उन्हें बहुत निवेदन किया गया परन्तु वे नहीं माने। **आपके चले जाने के बाद 29 जून 1879 को यहां आर्य समाज स्थापित हो गया।** **बाबू माधोनारायण प्रधान, बाबू गोपालसिंह कोषाध्यक्ष तथा पं. कृपाराम जी मन्त्री चुने गये।** देहरादून निवास में एक दिन ब्राह्मसमाज के एक सदस्य बाबू कालीमोहन घोष स्वामी जी के पास आये थे। पं. कृपाराम के ज्येष्ठ भाई हरगुलाल तथा पं. मुकन्दलाल तहसीलदार वहां उपस्थित थे। उन्होंने स्वामी से प्रार्थना की कि आप कल हमारे गृह पर भोजन करें। स्वामीजी ने कहा कि मुझे भोजन करने में कोई संकोच नहीं। अतः श्री घोष की विनती पर उन्होंने भोजन करना स्वीकार कर लिया। इस प्रथम यात्रा के बाद दूसरी बार स्वामीजी 7 अक्तूबर से 20 नवम्बर सन् 1880 तक 45 दिनों तक देहरादून आ कर रहे और वैदिक धर्म का प्रचार किया। पौराणिकों से शास्त्रार्थ की चर्चा चली परन्तु कोई तैयार नहीं हुआ। इसी प्रकार से मुसलमानों व ईसाईयों ने भी शास्त्रार्थ करने की इच्छा तो प्रदर्शित की परन्तु बात आगे नहीं बढ़ी।

एक दिन **मिस्टर हैनसी (Hennassy)** महोदय, डिपूटी सुपरिटेंडेट, जी.टी. सर्वे आफिस देहरादून से भेंट हो गई। वात्र्तालाप करते हुए श्री स्वामीजी महाराज ने उक्त महोदय से दूरदर्शी तथा सूक्ष्मदर्शी यन्त्रों की बनावट तथा निर्माण की चर्चा करते हुए कहा कि प्राचीन काल के आर्यों में इनके प्रयोग करने का ग्रन्थों में उल्लेख मिलता है। वह साहब यह सुन कर आश्चर्यचकित थे और स्वामी जी के संग स्वयं घूम-घूम कर प्रत्येक यन्त्र दिखलाते जाते तथा उसके विषय में स्वामीजी से बातचीत करते तथा जानकारी प्राप्त करते रहे।

स्वामी दयानन्द जी की दो बार देहरादून यात्रा के बाद वैदिक धर्म के प्रचार व प्रसार की नींव परतन्त्रता के काल में पड़ी जिसने न केवल सत्य व वैदिक धर्म के प्रचार अपितु देश की आजादी व हैदराबाद सत्याग्रह आदि में महत्वपूर्ण योगदान किया। शिक्षा के क्षेत्र में भी आर्य समाज व इसके पुरूषों द्वारा अनेक डी.ए.वी. इण्टर व पीजी कालेज, डीबीएस कालेज, आर्य इन्टर कालेज, महादेवी कन्या पाठशाला जो वर्तमान में गढ़वाल मण्डल का महिलाओं का सबसे बड़ा स्नातकोत्तर कालेज है, रामप्यारी कन्या इण्टर कालेज आदि अनेक विद्यालयों की स्थापना हुई जिन्होंने शिक्षा के प्रचार क्षेत्र में अपूर्व ऐतिहासिक महत्वपूर्ण योगदान किया है। स्वामी श्रद्धानन्द बाल वनिता आश्रम भी आर्य समाज से प्रेरित व प्रभावित लोगों द्वारा स्थापित संस्था है जिसने अतीत में अनेक अनाथ बालको व बाल वनिताओं के जीवनों की रक्षा की। देश के प्रतिष्ठित वैदिक विद्वान अथर्ववेद व सामवेद भाष्कार पं. विश्वनाथ वेदोपाध्याय, स्वामी समर्पणानन्द जी, आचार्य बृहस्पति शास्त्री, निरूक्त के भाष्कार पं. चन्द्रमणि विद्यालंकार, डा. सत्यकेतु विद्यालंकार, डा. सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार, महात्मा आनन्द स्वामी, पं. रूद्रदत्त शास्त्री आदि भी देहरादून से जुड़े रहे हैं। विगतम अनेक वर्षों से स्वामी प्रणवानन्द सरस्वती और ऋषिभक्त एवं याज्ञिक स्वामी चित्तेश्वरानन्द सरस्वती भी देहरादून से सक्रिय रूप से जुड़े हुए हैं। इनमें से हमने प्रायः सभी की प्रत्यक्ष व साहित्यिक संगति की है और नानाविध लाभान्वित हुए हैं। इस अवसर पर हम आर्यनेता श्री धर्मेन्द्र सिंह आर्य, आर्य विद्वान प्रा. अनूप सिंह, ऋषिभक्त श्री संसार सिंह रावत, श्री धर्मपाल सिंह, श्री शिवनाथ आर्य, श्री राजेन्द्र कुमार, श्री ईश्वर दयालु आर्य तथा श्री ठाठ सिंह को भी स्मरण करना चाहते हैं जिनके साथ हमने कार्य किया और आगे बढ़े हैं। हमारे यहां तक पहुंचने में इन सभी बन्धुओं सहित हम सबके कुछ विरोधी बन्धुओं की भी भूमिका रही है। सम्प्रति देहरादून श्री प्रेमप्रकाश शर्मा व उनकी सेवाओं को पाकर धन्य है। आप वैदिक साधन आश्रम, तपोवन के यशस्वी मंत्री एवं देहरादून के सभी आर्य समाजों व आर्य संस्थाओं के प्राण हैं। श्री शर्मा जी के साथी आर्य प्रतिनिधि सभा, उत्तराखण्ड के प्रधान श्री गोविन्द सिंह भण्डारी भी एक कट्टर ऋषिभक्त और तेजस्वी व ओजस्वी आर्य नेता हैं। इन व ऐसे अनेक पूवर्जों के तप का प्रभाव है कि आर्य समाज आज भी देश व समाज को अपनी बहुमूल्य सेवायें दे रहा है। देहरादून का यह भी सौभाग्य है कि महर्षि दयानन्द के बाद उनके एक परमभक्त रक्तसाक्षी पं. लेखराम जी का देहरादून पदार्पण हुआ था और वह यहां आर्यसमाज, देहरादून के पुरोधा ऋषिभक्त पं. कृपाराम जी से मिले थे।

**पं. कृपाराम जी देहरादून में आर्य समाज के प्रथम पुरूष थे जिनकी सक्रियता के कारण देहरादून में महर्षि दयानन्द का पदार्पण हुआ और यह नगर वैदिक धर्म व संस्कृति से जुड़ा। आर्यजगत की अग्रिम पंक्ति के विद्वान पं. बुद्धदेव विद्यालंकार जो संन्यास लेने के बाद स्वामी समर्पणानन्द के नाम से प्रसिद्ध हुए, पं. कृपाराम जी के दौहित्र थे। हम उन्हें उनके कार्यों के लिए सश्रद्ध नमन करते हैं।** सम्प्रति देहरादून में वैदिक साधन आश्रम, तपोवन, गुरूकुल पौंधा तथा द्रोणस्थली कन्या गुरूकुल जैसी संस्थायें संचालित हैं जिनका वैदिक धर्म व संस्कृति के प्रचार में अपना विशेष महत्व है। आर्यसमाज इन संस्थाओं की गतिविधियों व प्रेरणा से आगे बढ़ रहा है। ईश्वरीय विचारधारा वेद को अपनी विचारधारा, मिशन व धर्म मानने के कारण आर्यसमाज का भविष्य सदैव उज्जवल है। यह वैदिक धर्म ही भविष्य का विश्व धर्म है, इसमें हमें किंचित सन्देह नहीं है। इन्हीं पंक्तियों के साथ हम इस लेख को विराम देते हैं।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**